राष्ट्रीय टेक्सटाईल निगम (डी. आर. एंड पी.) लिमिटेड

बनाम

बैंक ऑफ राजस्थान व अन्य

(सिविल अपील सं. 721/2008)

28 जनवरी, 2008

[डॉ. अरिजीत पसायत और पी. सताशिवम, जे. जे.]

रुग्ण कपडा उपक्रम (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1974 -धारा 3, 4 और 5-नियत दिनांक के पश्चात उत्पन्न होने वाली ब्याज राशियों के भुगतान का दायित्व- ऋणों पर- उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों पर विचार किए बिना ही उच्च न्यायालय द्वारा प्रश्न का विनिश्चय किया गया। अभिनिर्धारित- चूंकि उच्चतम न्यायालय के निर्णय उच्च न्यायालय के समक्ष उद्धृत नहीं किये गये थे, अतः मामला उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों को विचार में लेकर विवाद तय करने हेतु उच्च न्यायालय को प्रेषित किया गया।

वर्तमान मामलों में, विचारणीय प्रश्न यह था कि -

क्या बैंकों द्वारा दिये गये ऋणों पर नियत दिनांक के बाद उत्पन्न होने वाली ब्याज राशि का भुगतान रूग्ण् कपड़ा उपक्रम (राष्ट्रीयकरण)

अधिनियम, 1974 के प्रावधानों के तहत प्राथमिकता के आधार पर किया जाना है।

अपीलार्थी ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने उच्चतम न्यायालय के निर्णयों स्टेट बैंक ऑफ इंदौर बनाम भुगतान आयुक्त व अन्य 2004(11) एससीसी 516 तथा नेशनल टेक्सटाईल कारपोरेशन (गुज) लिमिटेड बनाम भारतीय स्टेट बैंक व अन्य 2006 (7) एससीसी 542 में प्रतिपादित सिद्धान्तों को विचार में लिए बिना ही मामलों को निस्तारित किया गया।

अपीलों को निस्तारित करते हुए और मामला उच्च न्यायालय को प्रेषित करते हुए न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया कि-

उच्च न्यायालय के समक्ष कोई उपस्थिति नहीं थी। अतः वर्तमान मामले में निर्भर किये गये न्यायिक निर्णयों की सुसंगतता व प्रयोज्यता पर कोई विचार नहीं हुआ। अतएव आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है और मामला उच्च न्यायालय को नए सिरे से सुनवाई एवं उपर्युक्त संदर्भित न्याय-निर्णयन की रोशनी में विनिश्चयन हेतु भेजा जाता है।

उच्च न्यायालय के आदेश से आयुक्त को प्रति-प्रेषित किए गए मामलों को भी उपर्युक्त संदर्भित न्याय-निर्णयन की रोशनी में निर्णीत किया जावेगा। [पैरा 11 और 12] [130-सी, डी, एफ]

स्टेट बैंक ऑफ इंदौर बनाम भुगतान आयुक्त व अन्य 2004 (11) एस. सी. सी. 516; राष्ट्रीय वस्त्र निगम (गुज) लिमिटेड बनाम भारतीय स्टेट बैंक और अन्य। 2006 (7) एससीसी 542-संदर्भित को।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं. 721/2008

राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ, जयपुर के द्वारा एस. बी. सिविल रिट याचिका संख्या 8908/2002 में पारित अंतिम निर्णय व आदेश दिनांक 21-07-2005 से।

के साथ

सिविल अपील संख्या 720/2008

अपीलार्थी के लिए संलग्न जी. ई. वाहनवती, एस. जी., बी. सुनीता राव।

श्याम दीवान, हेमंत शर्मा, अजय कुमार, बीजू और प्रत्यर्थीगण के लिए अनुपम लाल दास।

न्यायालय का निर्णय डॉ. अरिजीत पसायत, जे. द्वारा दिया गया था

1. अनुमति दी गई

2. इस अपील में राजस्थान उच्च न्यायालय की जयपुर पीठ के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अपीलकर्ता द्वारा दायर सिविल रिट याचिका को खारिज करने के फैसले को चुनौती दी गई है।

3. पृष्ठभूमि के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं:

रूग्ण् टेक्सटाइल अंडरटेकिंग राष्ट्रीयकरण अधिनियम, 1974 (संक्षेप में "अधिनियम") 1.4.1974 से प्रभावी हो गया। एक कपड़ा उपक्रम यानी महालक्ष्मी मिल्स लिमिटेड ब्यावर अधिनियम के तहत केंद्र सरकार में निहित हो गया। इसे नेशनल टेक्सटाइल कॉर्पोरेशन (संक्षेप में "कॉर्पोरेशन") को हस्तांतरित कर दिया गया और उसके बाद वर्तमान अपीलकर्ता को, जो कॉर्पोरेशन की सहायक कंपनी है यानी नेशनल टेक्सटाइल कॉर्पोरेशन (दिल्ली, पंजाब, राजस्थान) लिमिटेड को हस्तांतरित कर दिया गया। अपीलकर्ता का रुख यह था कि अधिनियम की धारा 3 के तहत नियत दिनांक अर्थात 1.4.1974 से, प्रत्येक रूग्ण् कपड़ा उपक्रम और ऐसे कपड़ा उपक्रम के संबंध में मालिक का अधिकार स्वत्व व हित पूरी तरह से केंद्र सरकार और इसके बाद निगम में निहित हो गया। अधिनियम की धारा 4 में निहित होने के सामान्य प्रभावों को दिया गया है। अधिनियम की धारा 5 रूग्ण् कपड़ा उपक्रम के मालिक की देनदारी से संबंधित है और स्पष्ट रूप से प्रावधान करती है कि, धारा 5 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट देनदारी के

अलावा, हर देनदारी नियत दिनांक से पहले की अवधि के संबंध में रूग्ण् कपड़ा उपक्रम के मालिक का दायित्व था और यह उसके खिलाफ लागू होगा, न कि केंद्र सरकार या निगम के खिलाफ। 25.5.1978 को, प्रत्यर्थी-बैंक ने भुगतान आयुक्त (संक्षेप में "आयुक्त") के समक्ष लगभग 34.72 लाख रुपये की मांग करते हुए दावेदारी की। दावे की जांच करने के बाद आयुक्त ने दिनांक 31-03-1974 तक बकाया राशि, नियत दिनांक से एक दिन पूर्व तक, लगभग 21.22 लाख रुपये की सीमा तक दावेदारी अनुज्ञात की। आयुक्त द्वारा ब्याज की हद तक दावेदारी खारिज कर दी गई। प्रत्यर्थी-बैंक द्वारा अधिनियम की धारा 23 के तहत जिला न्यायाधीश के समक्ष एक अपील भी दायर की गई थी। जिला न्यायाधीश ने आदेश दिनांक 20.8.1987 के द्वारा माना कि नियत तिथि के बाद की अवधि के लिए दायित्व मालिक का होगा और यह माना कि प्रत्यर्थी 31.3.1974, के बाद की अवधि के लिए संविदात्मक दर पर ब्याज का हकदार था। विवरण तैयार करने के लिए मामले को आयुक्त के पास भेज दिया गया।

4. आदेश को राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई। विवाद 31.3.1974 के बाद के भुगतान के प्रश्न तक ही सीमित था। आदेश को उच्च न्यायालय और इस न्यायालय के समक्ष असफल रूप से चुनौती दी गई। आयुक्त ने करीब 16.70 लाख रुपये की राशि का अवार्ड पारित किया। फिर से जिला न्यायाधीश के समक्ष एक अपील दायर की गई

जिसमें उनका रुख यह था कि आयुक्त ने जिला न्यायाधीश के पहले के निर्देशों के अनुसार ब्याज की राशि की गणना नहीं की थी और ब्याज की गणना छह मासिक विराम के आधार पर की जानी थी। जिला न्यायाधीश ने अपील स्वीकार कर ली और मामले को फिर से आयुक्त के पास भेज दिया। उच्च न्यायालय के समक्ष इस आधार पर एक पुनरीक्षण दायर की गई थी कि जिला न्यायाधीश ने भूतपूर्व मालिक के दायित्व के संबंध में अधिनियम की धारा 3, 4, 5 और 11 के प्रावधानों की अवहेलना करते हुए दिनांक 01-04-1974 के बाद ब्याज दिलाने में गलती की थी। इस न्यायालय के समक्ष एक अंतरण याचिका दायर की गई थी, जिसमें विभिन्न उच्च न्यायालयों में आगे की कार्यवाही पर रोक लगाने का अनुरोध किया गया था, क्योंकि समान बिंदु उठाये गये थे।

5. इस न्यायालय ने दिनांक 15.3.2004 के आदेश द्वारा उच्च न्यायालय को सिविल अपील संख्या 2314/2000 और संबंधित मामलों में इस न्यायालय के निर्णय की अनुपालना करने का निर्देश दिया। अन्तरण याचिका संख्या 155-58/2004 के प्रत्यर्थियों में से एक प्रत्यर्थी ने एक आवेदन पत्र दायर किया था। इस न्यायालय ने स्पष्ट किया था कि उच्च न्यायालय में लंबित मामले, जिनमें निणर्य के लिए उत्पन्न होने वाले मुद्दे हैं या शामिल मुद्दे के समान, सिविल अपील सं॰ 2374/ 2000 दिनांक 21-07-2005 के निर्णय की प्रतिक्षा करेंगे। जैसा कि ऊपर बताया गया है,

उच्च न्यायालय ने रिट याचिका खारिज कर दी। उनका मानना था कि उच्च न्यायालय के समक्ष उठाये गये मामलों का निपटारा उच्च न्यायालय द्वारा पहले ही किया जा चुका है।

6. अपील के समर्थन में, विद्वान सॉलिसिटर जनरल श्री जीई वहनवती ने प्रस्तुत किया कि दुर्भाग्य से कुछ गलतफहमी के कारण उच्च न्यायालय के समक्ष कोई उपस्थिति नहीं हुई। किसी भी स्थिति में , स्टेट बैंक ऑफ इंदौर बनाम भुगतान आयुक्त एवं अन्य में इस न्यायालय के निर्णय [2004(11) एससीसी 516] और नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन (गुजरात) लिमिटेड बनाम भारतीय स्टेट बैंक और अन्य [2006(7)एससीसी 542] पर ध्यान नहीं दिया गया।

7. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी संख्या 1-बैंक के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि मुद्दा अंतिम रूप ले चुका है और इसलिए रिट याचिका को खारिज करना उच्च न्यायालय के लिए उचित है।

8. स्टेट बैंक ऑफ इंदौर बनाम भुगतान आयुक्त एवं अन्य [2004(11)एससीसी 516] बैंक ने इस न्यायालय के समक्ष अपील दायर की थी। उक्त मामले में अन्य बातों के साथ-साथ यह विवेचित किया गया किः

"यहां ऊपर दिए गए अधिनियम के प्रावधानों पर एक नज़र डालने से पता चलता है कि धारा 3 के आधार पर रूग्ण कपड़ा उपक्रमों में मालिक का अधिकार, स्वत्व और हित केंद्र सरकार को हस्तांतरित और निहित हो जाता है। धारा 4 ऐसे निहित होने के प्रभाव का प्रावधान करती है। यह दर्शाता है कि दायित्व, जो केंद्र सरकार में निहित है, केवल धारा 5 की उपधारा (2) के तहत निर्दिष्ट दायित्व है। इस स्थिति को आगे और धारा 5(1) द्वारा स्पष्ट किया गया है, जिसमें कहा गया है कि धारा 5 की उपधारा (2) में उल्लिखित देनदारियों को छोड़कर अन्य सभी देनदारियां रुग्ण कपड़ा उपक्रमों के मालिक की देनदारियां बनी रहेंगी और मालिक के खिलाफ लागू होंगी, न कि केंद्र सरकार या राष्ट्रीय कपड़ा निगम के खिलाफ। इस प्रकार धारा 5(1) के आधार पर किसी भी दायित्व की वसूली का उपाय मालिक के विरुद्ध है। निःसंदेह, देनदारी शब्द में न केवल ऋण राशि शामिल होंगी बल्कि ऐसी ऋण राशि पर ब्याज के रूप में देय राशि भी शामिल होगी।

धारा 5 की उपधारा (2) निर्दिष्ट करती है कि कौन सी देनदारियाँ केंद्र सरकार द्वारा ली जाती हैं। उपधारा (2)(ए)

केंद्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा दिए गए ऋणों की बात करती है। इस प्रकार, विधायिका अब देनदारी और ऋण की शर्तों के बीच अंतर कर रही है। जब ऋण शब्द का उपयोग किया जाता है तो यह निर्दिष्ट किया जाता है कि ऋण उस पर देय ब्याज सहित होगा। यही स्पष्टीकरण धारा 5(2)(बी) में भी पाया जा सकता है। इससे विधायिका की मंशा का पता चलता है। इस प्रकार, भले ही "देनदारी" शब्दावली में ब्याज राशि के लिए दायित्व भी शामिल है, "ऋण" शब्दावली में ब्याज राशि शामिल नहीं है, जब तक कि अधिनियम में अन्यथा निर्दिष्ट न किया गया हो। यह स्थिति धारा 9 द्वारा सुदृढ़ की गई है, जिसमें मालिक को भुगतान की गई राशि पर 4% की दर से ब्याज भी देय होता है। इस प्रकार, जहां विधायिका यह निर्दिष्ट करना चाहती थी कि कुछ राशियों पर ब्याज लगेगा, उसने विशेष रूप से ऐसा किया है।

धारा 21 में प्रावधान है कि दूसरी अनुसूची में निर्धारित राशि का भुगतान प्राथमिकता के आधार पर किया जाना है। दूसरी अनुसूची का सुसंगत भाग इस प्रकार है:

दूसरी अनुसूची (धारा21, 22, 23 और 27 देखें) रूग्ण कपड़ा उपक्रम के संबंध में देनदारियों के निर्वहन के लिए प्राथमिकताओं का क्रम।

भाग ए

अधिग्रहण के बाद प्रबंधन अवधि

श्रेणी ।

(ए) बैंक द्वारा दिया गया ऋण।

(बी) बैंक के अलावा किसी अन्य संस्था द्वारा दिया गया ऋण।

(सी) कोई अन्य ऋण।

(डी) व्यापार या विनिर्माण कार्यों के उद्देश्य से लिया गया कोई भी उधार।

श्रेणी ॥

(ए) केंद्र सरकार या राज्य सरकार को देय राजस्व, कर, उपकर, दरें या कोई अन्य बकाया।

(बी) कोई अन्य बकाया।

इस प्रकार, दूसरी अनुसूची का शीर्षक देनदारियों के निर्वहन के लिए प्राथमिकताएं प्रदान करता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, देनदारी में ब्याज शामिल होगा। इसमें ऋण भी शामिल होगा। इसमें प्राप्त किये गये उधार भी शामिल होंगे। इसमें राजस्व, कर, उपकर, दरें और अन्य बकाया शामिल होंगे। हालाँकि, प्राथमिकता में भुगतान ऋण के लिए है। भाषा में अंतर यह स्पष्ट करता है कि प्राथमिकता में जो भुगतान किया जाना था वह केवल ऋण की राशि यानी मूल राशि थी, न कि उस पर देय ब्याज की राशि। बेशक, ब्याज के प्रति भुगतान देनदारी के रूप में बना रहेगा, लेकिन उसकी वसूली के लिए उपाय यह होगा कि मालिक/प्रतिभू के ख़िलाफ़ कार्यवाही की जाए। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत ब्याज राशि का भुगतान प्राथमिकता में नहीं किया जाना है। इस दृष्टि से, खुले शब्दों में कहें तो, 31-3-1974 तक का ब्याज भी प्राथमिकता में देय नहीं था। हालाँकि, चूँकि उत्तरदाता अपील में नहीं आए हैं, इसलिए हमें आक्षेपित निर्णय के उस हिस्से में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता है जो 31-3-1974 तक ब्याज के भुगतान का निर्देश देता है।"

9. फिर से नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन (गुजरात) लिमिटेड बनाम भारतीय स्टेट बैंक और अन्य (2006(7) एससीसी 542) स्टेट बैंक ऑफ इंदौर के मामले (उपर्युक्त) का उल्लेख करने के बाद इस न्यायालय ने निम्नानुसार विवेचित किया :

> "ऋण और देनदारी के बीच अंतर मौजूद है; जबकि मूल राशि प्राथमिकता दावे के दायरे में आएगी, ब्याज का दावा नहीं।

उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय में भारतीय स्टेट बैंक बनाम एडवर्ड टेक्सटाइल मिल्स लिमिटेड पर भरोसा किया। इस न्यायालय द्वारा स्टेट बैंक ऑफ इंदौर बनाम भुगतान आयुक्त के मामले में उक्त निर्णय को उलटते हुए अभिर्धारित किया : (एससीसी पृष्ठ 522, पैरा 9-11)

इस प्रकार, दूसरी अनुसूची का शीर्षक देनदारियों के निर्वहन के लिए प्राथमिकताएं प्रदान करता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, देनदारी में ब्याज शामिल होगा। इसमें ऋण भी शामिल होगा। इसमें प्राप्त किये गये उधार भी शामिल होंगे। इसमें राजस्व, कर, उपकर, दरें और अन्य बकाया शामिल होंगे। हालाँकि, प्राथमिकता में भुगतान ऋण के लिए है। भाषा में अंतर यह स्पष्ट करता है कि प्राथमिकता में जो भुगतान किया जाना था वह केवल ऋण की राशि यानी मूल राशि थी, न कि उस पर देय ब्याज की

राशि। बेशक, ब्याज के प्रति भुगतान देनदारी के रूप में बना रहेगा, लेकिन उसकी वसूली के लिए उपाय यह होगा कि मालिक/प्रतिभू के ख़िलाफ़ कार्यवाही की जाए। इस न्यायालय ने भारतीय औद्योगिक वित्त निगम लिमिटेड बनाम कैनानोर एसपीजी व डब्ल्यू वी जी मिल्स लिमिटेड में यह अभिनिर्धारित किया है कि अधिनियम के प्रावधानों के आधार पर मुख्य देनदार और प्रतिभू का दायित्व समाप्त नहीं होता है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 21 के तहत यदि मुआवजे का भुगतान किया जाना है और दूसरी अनुसूची पूर्ण दावे को संतुष्ट नहीं करती है तो ऋणदाता को शेष राशि के लिए सिविल मुकदमा दायर करने से नहीं रोका गया है। इसके अलावा, पंजाब नेशनल बैंक बनाम यूपी राज्य में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि भले ही किसी प्रतिभू के खिलाफ वसूली का तरीका प्रभावित हुआ हो, मुख्य देनदार\प्रत्याभूतिदाता की देनदारी अधिनियम के प्रावधानों के तहत प्रभावित नहीं हुई है। न केवल उपर्युक्त न्यायिक निर्णय हम पर बाध्यकारी हैं, बल्कि हम उनमें जो कुछ भी निर्धारित है उससे पूरी तरह सहमत हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत ब्याज राशि का भुगतान प्राथमिकता में नहीं किया जाना है। इस दृष्टि से, खुले शब्दों में कहें तो, 31-3-1974 तक का ब्याज भी प्राथमिकता में देय नहीं था।

10. हमने पाया कि उच्च न्यायालय के समक्ष कोई उपस्थिति नहीं थी और इसलिए, वर्तमान में जिन दो निर्णयों पर भरोसा किया गया था, उनकी सुसंगतता और प्रयोज्यता पर विचार नहीं किया गया था।

11. इसलिए, हम आक्षेपित आदेश को रद्द करते हैं और मामले को नए सिरे से सुनने के लिए और स्टेट बैंक ऑफ इंदौर (उपर्युक्त) और स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया (उपर्युक्त) के मामलों में जो कहा गया है उसके आलोक में विनिश्चय करने हेतु उच्च न्यायालय को भेजते हैं। यह स्पष्ट किया जाता है कि पार्टियों को अपने-अपने रुख के समर्थन में सामग्री रखने की अनुमति होगी।

एसएलपी (सी) संख्या 7681/2006

12. अनुमति दी गई। जहां तक इस अपील का सवाल है, इस मामले को बॉम्बे हाई कोर्ट की नागपुर बेंच के आक्षेपित आदेश द्वारा आयुक्त को प्रतिप्रेषित किया गया है। यह स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है कि आयुक्त मुद्दों पर नए सिरे से निर्णय लेते समय स्टेट बैंक ऑफ इंदौर (उपर्युक्त) और स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया (उपर्युक्त) के मामलों के निर्णयों को ध्यान में रखेंगे।

13. दोनों अपीलें तदानुसार निस्तारित की जाती हैं। कोई खर्चे नहीं.

अपीलें निस्तारित

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल **'सुवास'** की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी दुडाराम खोकर (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।